RESEARCH HUB – International Multidisciplinary Research Journal (RHIMRJ)
Research Paper
Available online at: www.rhimrj.com

भारतीय वाद्य संगीत और इसकी उत्पत्तिः एक अध्ययन

Dr. Nutan Kavitkar

Lecturer (Department of Music), Govt. Meera Girls college Udaipur Rajasthan

सारांश

संगीत इस खूबसूरत दुनिया में हर जगह पाया जाता है। जैसे हर कला को अपने उपकरण और विशिष्टता को व्यक्त करने के लिए एक मजबूत माध्यम की आवश्यकता होती है, उसी तरह एक संगीत वाद्ययंत्र 'नाद' को व्यक्त करने का एक माध्यम है, जिसका महत्व पूरे विश्व में है। भारतीय संगीत में वाद्य संगीत का महत्वपूर्ण स्थान है। यह संगीत के तीन पहलुओं में से एक है (गायन संगीत, वाद्य संगीत और नृत्य) जिसे भारतीय संगीत में 'संगीत' के रूप में भी जाना जाता है। वाद्य संगीत को ''वाध्य संगीत'' के रूप में जाना जाता है। वाद्य संगीत की शुरुआत से ही, दो घटक बहुत महत्वपूर्ण हैं– यंत्र और वाद्य यंत्र या वाद्य वादक (कलाकार)। उपरोक्त वर्णित किसी एक घटक के अभाव में संगीत कला का प्रकटीकरण असम्भव है। संगीत को प्राचीन काल से ही भावनाओं को व्यक्त करने के सीधे माध्यम के रूप में जाना जाता है। वर्तमान अध्ययन भारतीय संगीत वाद्ययंत्र की उत्पत्ति का आकलन करता है।

मुख्य शब्दः *कलाकार, संगीत, नृत्य, संगीत वाद्ययंत्र*

परिचयः

स्वर संगीत में किसी भी भाषा के मजबूत शब्द और संगीत के स्वर होते हैं जिन्हें 'स्वर' भी कहा जाता है। जबकि, वाद्य संगीत में, स्वर समान हैं, लेकिन शब्दों से बनी किसी भी भाषा का स्थान बोल ने ले लिया है। संगीत वाद्य यंत्रों द्वारा संगीत उत्पन्न करने के लिए संगीत स्वरों पर बोल बजाए जाते हैं। उदाहरण के लिए, प्लक किए गए वाद्य यंत्रों की रचनाओं में बोल बजाए जाते हैं जैसेः दा, दिर, दारा आदि।

भारतीय शास्त्रीय संगीत, जैसा कि पहले बताया गया है, प्राथमिक रूप से व्यक्तिवादी है। इसलिए, हमारे वाद्ययंत्रों को भी एकल बजाने के लिए डिजाइन किया गया है। भारतीय संगीतकार संगीत को देवत्व तक पहुँचने का माध्यम मानते हैं और इसलिए वे गायन या वाद्य यंत्र का अभ्यास करते हुए स्वर–साधना (स्वर–संस्कृति) में लगे हुए हैं। वह अपने अभ्यास में इतना तल्लीन हो जाता है कि वह अपने परिवेश से पूरी तरह स्पष्ट हो जाता है और उसका व्यक्तित्व 'नादब्रह्म' में विलीन हो जाता है। हमारे संगीत वाद्ययंत्रों का एकल चरित्र विशुद्ध रूप से व्यक्तिवादी दृष्टिकोण के अनुरूप है। चूंकि, भारतीय शास्त्रीय संगीत में कोई निश्चित या पूर्व–लिखित रचनाएँ नहीं हैं। प्रत्येक वादक स्वयं संगीतकार होता है और उसे राग की व्याख्या द्वारा निर्धारित सीमाओं के भीतर अपनी पसंद के माध्यम को संभालने की पूर्ण स्वतंत्रता होती है। हाल के दिनों में प्रख्यात संगीतकारों द्वारा एक समूह में भारतीय वाद्ययंत्रों का उपयोग करने और पश्चिम में आर्केस्ट्रा संगीत रचना के तरीके से एक आर्केस्ट्रा प्रभाव पैदा करने के प्रयास किए गए हैं, लेकिन वे बहुत प्रभावी नहीं रहे हैं। अधिकांश वाद्ययंत्र एक समूह में कमजोर और अप्रभावी लगते हैं, क्योंकि अवधारणा और डिजाइन के अनुसार, वे केवल एकल में बजाए जाने के लिए होते हैं और इसलिए वांछित संगीत प्रभाव पैदा करने में सक्षम नहीं होते हैं।

भारतीय वाद्य संगीत का इतिहास और विकास

संगीत वाद्ययंत्रों ने भारतीय शास्त्रीय संगीत के विकास और विकास में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारतीय वाद्य संगीत के इतिहास और विकास पर एक विशाल विवरण उपलब्ध है। इस विशाल चित्रण को समझने के लिए इसे क्रमशः भूत, मध्य और वर्तमान काल जैसे प्राचीन काल, मध्यकाल और वर्तमान काल के आधार पर समय–समय पर विभाजित करने का प्रयास किया गया है।

पूर्व–वैदिक काल और उत्तर–वैदिक काल

पूर्व वैदिक काल

भारतीय संगीत के इतिहास में पूर्व वैदिक काल सबसे प्राचीन काल है। यह उस समय से संबंधित है जिसके बारे में आज कोई अनुक्रमिक साक्ष्य उपलब्ध नहीं है। इस समय अवधि के उपलब्ध प्रमाणों के अनुसार, धार्मिक अवसरों के दौरान अधिकांश यंत्रों का उपयोग मनुष्यों द्वारा किया जाता था। मोहनजोदड़ो और हड़प्पा सभ्यताओं को भारत की सबसे प्राचीन सभ्यता के रूप में जाना जाता है। हम संगीत वाद्ययंत्रों के बहुत सारे चित्र और मूर्तियां पा सकते हैं जो भारतीय संगीत की प्राचीन स्थिति का प्रतीक हैं। हड़प्पा सभ्यता के एक चित्र में हमें एक व्यक्ति मिलता है जो बाघ के पास ढोल बजा रहा है। कुछ आकृतियों में हमें एक प्रकार का डमरू मिलता है जो मनुष्य के गले से लटका हुआ दिखाई देता है। एक महिला की एक दिलचस्प तस्वीर भी है जो उसके बाएं हाथ के नीचे

2014, RHIMRJ, All Rights Reserved *ISSN:* 2349-7637 (Online)

एक ड्रम रखती है। ढोल के निर्माण के लिए, जानवरों की लंबी और संकुचित त्वचा, जिसमें स्वयं ध्वनि की गुणवत्ता बहुत कम थी, को काफी मात्रा में ध्वनि उत्पन्न करने के लिए तैयार किया गया था।

''द म्यूजिकल इंस्ट्रूमेंट्स ऑफ साउथर्न इंडिया एंड डेक्कन'' के लेखक कैप्टन डे के अनुसार, भारत के लोग हमेशा अपने स्वाद में पारंपरिक रहे हैं, और यह उनके संगीत और संगीत वाद्ययंत्रों में अधिक स्पष्ट है। इन लोगों का विवरण कई पुराने संस्कृत ग्रंथों में पाया जाता है, और यह दर्शाता है कि पिछले दो हजार वर्षों के दौरान वाद्ययंत्रों के रूपों में शायद ही कोई बदलाव आया हो। अजंता जैसे पुराने चित्र और मूर्तियां इस बात को और भी निर्णायक रूप से सिद्ध करती हैं। भारत के विभिन्न भागों में विभिन्न पुराने गुफा मंदिरों और प्राचीन बौद्ध शीर्षों और स्तूपों पर मौजूद मूर्तियों में कई वाद्य यंत्र पाए जाते हैं।

अमरावती और सांची में वाद्य यंत्रों की मूर्तियां भी मिली हैं। अमरावती में, अजीबोगरीब रुचि में से एक अठारह महिलाओं के एक समूह को ड्रम, एक शंख तुरही या शंख, एक सुरनाई की तरह, और दो वाद्ययंत्रों, जाहिरा तौर पर कुनानुन, को असीरियन वीणा के समान आकार के रूप में दिखाता है। साँची में, एक व्यक्ति की एक प्रकार की तुरही–श्रींगा–उसी आकार की एक आकृति है जो अब बंगाल में कार्यरत है।

उत्तर–वैदिक काल

वैदिक काल उस समय का है जिसमें चार वेदों की रचना हुई। वैदिक काल में सर्वप्रथम उपलब्ध साहित्य ही भारतीय संस्कृति का मूल आधार है। वैदिक काल में संगीत का विस्तृत वर्णन मिलता है।

ऋग्वेद के समय में संगीत के तीनों आयाम अर्थात् स्वर संगीत, वाद्य संगीत और नृत्य लोकप्रिय थे। संगीत का उपयोग, जो कि ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए वैदिक अनुष्ठानों और समारोहों से अविच्छिन्न रूप से जुड़ा हुआ है, की कल्पना सिंधु सभ्यता के रूप में भी की गई थी। जैमिनीय सूत्र पर एक भाष्य, सबराभाष्य, 'गीति' को एक क्रिया के रूप में परिभाषित करता है जो आंतरिक है और केवल स्वरों के रूप में श्रव्य है। गीत के लिए 'गाथा', 'गायत्र', 'गीत' और 'साम' जैसे कई पर्यायवाची शब्द थे। गायक (गायक) को 'गट्टुविट्टम', 'गायत्रीन' या 'गतिन' कहा जाता था। जब ऋग्वेद की ऋचाओं का निर्माण संगीत संकेतन (स्वरध्नोट्स द्वारा) में किया गया था, तो उन्हें 'स्त्रोत्र' के नाम से जाना जाता था। ऋग्वेद में स्वर संगीत के साथ बहुत सारे वाद्य यंत्र थे। यजुर्वेद के दौरान 'यागा' सबसे प्रसिद्ध धार्मिक समारोह था। यज्ञ की रस्म के लिए चार अलग–अलग ऋत्विज नाम से जाने जाने वाले चार लोगों को तय किया गया था, उन्हें 'होता', 'अध्व्रु', 'उद्गाथा' और 'ब्रह्मा' कहा जाता था। अश्वमेध यज्ञ के समय वीणा बजाई जाती थी। वेदों की अवधि के दौरान पेशेवर संगीतकार थे, जो विशेष वाद्ययंत्रों में विशिष्ट थे, उदाहरण के लिए वीणा–वादक, तुणव–वादक, शंख–वादक, अघाटी वादक और कहला वादक। तुनव वाद्य यंत्र था जबकि कहला आधुनिक शहनाई जैसा कुछ था। यजु–ंसंहिता में वीणा को तार वाद्य बताया गया है और वाण भी इसी वीणा का सबसे बड़ा रूप था। यजुर्वेद के दौरान अन्य प्रकार की वीणा, जैसे कि अघाटी, घटलिका या अपघटिका, कांड वीणा, पिछोला या पिछोरा स्टंबलवीना, तालुक वीणा, गोधा वीणा, अलाबू, कपिशर्शी और करकरी या कारकिका आदि का भी उपयोग किया जाता था। अथर्ववेद चारों वेदों में विशिष्ट है। दुंदुभि, अघट और करकरी आदि को अथर्ववेद के प्रमुख साधन बताए गए हैं। साथ ही भारतीय संगीत के सन्दर्भ में सामवेद का बहुत महत्व है। जैमिनीय सूत्र के अनुसार गीति को साम कहा गया है। साम को ऋग्वेद की ऋचाओं की सहायता से गाया जा सकता है। लेकिन साम का मूल रूप स्वरों में छिपा है। वैदिक साहित्य के अनुसार, एक ही ऋग पर अलग–अलग साम गाए जा सकते हैं, जो साम और ऋग को अलग करता है। ऋग्वेद के कुछ प्रसिद्ध वाद्य यंत्र हैं दुंदुभि, वाना, नाडी, वेणु, करकरी, गरगर, गोधा, पिंग और अघाटी। दुंदुभि की ध्वनि को बादलों की ध्वनि बताया गया है।

वीणा का प्रयोग आमतौर पर तार वाद्य यंत्रों के लिए किया जाता था। वाण वैदिक काल का सर्वाधिक लोकप्रिय वाद्य यंत्र था। तार वाद्य यंत्रों में, हम ऋग्वेद में वाण के संदर्भ पाते हैं। पूरे ऋग्वेद में, वीणा के बजाय, वाण का उल्लेख किया गया है, जो धनुष के आकार की वीणा थी, जिसमें कभी–कभी वेदों के भाष्यकार सायण के अनुसार सैकड़ों तार होते हैं। वाना दो प्रकार का प्रतीत होता हैय 'ग्रीक आइओलियन वीणा' और 'धनुष के आकार का वीणा'।

ग्रीक आइओलियन वीणा में सौ तार एक साथ बंधे थे और हवा के झोंके से बज रहे थे। वेदों के भाष्यकार सयाना ने इसे 'मरुद–वीणा' नाम दिया है जो पवन देवता की वीणा है। धनुष के आकार की वीणा को बेंत जैसे लकड़ी के घुमावदार टुकड़े से बजाया जाता था। यह ध्यान रखना दिलचस्प है कि प्राचीन सुमेरिया में, एक ऐसा ही वाद्य यंत्र था, जिसे बाना कहा जाता था। यह भी धनुष के आकार की वीणा थी। 'वा' और 'बा' अक्सर एक दूसरे से जुड़े होते हैं, और इसलिए भी प्राचीन भारत और प्राचीन सुमेरिया दोनों में यंत्र का नाम समान था। प्राचीन अरब में इसी तरह का एक उपकरण 'वन्ना' के नाम से जाना जाता था। या तो यंत्र ने भारत से सुमेरिया और अरब की यात्रा की या सुमेरिया से भारत और अरब की यात्रा की।

ऋग्वेद और अथर्ववेद में वर्णित एक अन्य तार यंत्र 'करकरी' है। वेदों के भाष्यकार सायण ने कहा कि यह एक विशेष प्रकार का वाद्य यंत्र था, लेकिन यह निर्दिष्ट नहीं करता कि यह किस प्रकार का वाद्य है। मोनियर विलियम्स, विल्सन और आप्टे इसे एक तार वाद्य यंत्र मानते हैं, लेकिन यह निर्दिष्ट नहीं करते कि किस प्रकार का वाद्य यंत्र है। एक अन्य वाद्य यंत्र को 'कंदवीना' के नाम से जाना जाता था। बाँस के जोड़ों को एक साथ जोड़कर और उस पर डोरी खींचकर कंदवीना बनाई जाती थी।

यजुर्वेद के दौरान उपयोग किए जाने वाले मुख्य वाद्य यंत्र वीणा, वाण, शंख, तुनव, दुंदुभी, भूमि–दुंदुभि और तलव आदि थे। ताल को इंगित करने के लिए प्रतीक के रूप में अघाटी का उपयोग किया गया था। अथर्ववेद में इसे अघत नाम दिया गया है। ताल वाद्य यंत्रों में, वेदों में सबसे अधिक उद्धृत 'दुंदुभि' है। आजकल उत्तर भारत में वाद्य यंत्रों के प्रकार में थोड़ा बहुत परिवर्तन हो गया है, परन्तु सामान्य संरचना वही रही है। दुंदुभी में दो ढोल थे – एक बड़ा और दूसरा छोटा। यह लकड़ी के एक टुकड़े को खोखला करके और एक बैल की खाल को मुंह के ऊपर खींचकर बनाया गया था। इसे डंडे से बजाया जाता था। यह ज्यादातर वैदिक काल में युद्धों के दौरान खेला जाता था। बाद में इसे राजा के दरबार और मंदिरों में बजाया जाने लगा। 'भूमि–दुंदुभि' वेदों में उल्लिखित एक और ड्रम है। यह एक मिट्टी का ढोल था जिसे जमीन में एक गड्ढा खोदकर और उसे चमड़े से ढक कर बनाया गया था। यज्ञ के समय इसे छड़ी से बजाया जाता था। छड़ी आमतौर पर एक बैल की पूंछ से बनी होती थी। 'वनस्पति' एक लकड़ी का ड्रम था। एक अन्य ढोल जिसे आमतौर पर 'आदम्बरा' कहा जाता है। इसका सटीक आकार और संरचना ज्ञात नहीं है। 'गरगारा' युद्धों के दौरान इस्तेमाल किया जाने वाला एक और ढोल था। यह एक ओनोमेटोपोएटिक शब्द है। इसका प्रयोग 'गरगर' ध्वनि उत्पन्न करने के लिए किया जाता है। वायु वाद्यों में हमें नाड़ी या नालिका का उल्लेख मिलता है। बकुरा, तूनव और शंख (शंख) अन्य वाद्य यंत्र थे। वेणु या बांस की बांसुरी का भी उपयोग किया जाता था। संहिता काल (5000–4000 ईसा पूर्व) में जब चार वेदों की रचना की गई, तो हमें ऋग्वेद में संगीत के बारे में जानकारी मिलती है, हालांकि सामगण मुख्य रूप से सामवेद से संबंधित है। तैत्तिरीय ब्राह्मण में तुन्व, वीणा, दुंदुभि और शंख का उल्लेख है। सयाना तुनव को वेणु और तलवा को वह मानता है जिसने कहला बजाया था, हालांकि तलव एक वाद्य यंत्र भी प्रतीत होता है। ऐतरेय आरण्यक ने एक सुंदर मार्ग में मानव शरीर को 'दैवी वीणा' के रूप में वर्णित किया है और 'मानुषी वीणा' के साथ इसकी निकटता को दर्शाता है, अर्थात मनुष्य द्वारा बनाई गई वीणा, लकड़ी, तांत्रिक आदि। सीधा। वीणा का निचला भाग 'अम्भना' नामक खोखली लकड़ी का बना होता था जिसका अग्र भाग तने हुए चमड़े से ढका होता था। ऐतरेय आरण्यक ने इसे 'लोमशेन चर्मनास्स्पिहिता' कहा है। धनुष के आकार की वीणाओं को वाण कहा जाता था और भहुत मूर्तिकला में देखा जा सकता है।

उपनिषद और शिक्षा ग्रंथ

उपनिषद भारतीय विचारधारा के प्रमुख स्रोत हैं। उपनिषदों को वैदिक काल के ज्ञानकांडों के साथ सभी कर्मकांडों के प्रतिशोध के साथ प्रकट रहस्यमय साहित्य के रूप में जाना जाता है। उपनिषदों को ब्राह्मण ग्रंथों के परिशिष्ट के रूप में बनाया गया था। इसलिए, वैदिक संगीत में गहरी अंतर्दृष्टि के लिए उपनिषदों का सावधानीपूर्वक अध्ययन करना एक बुनियादी आवश्यकता है।

उपनिषदों द्वारा समागण की बहुत प्रशंसा की जाती है। गीत, वीणा, पाणव और लसित मन्त्र ब्रह्मणोपनिषद के घटक माने जाते हैं जो सामवेद से संबंधित है।

"हसीतम रुदितम गीतम! वीणा पनवलसितम! – – !

उपनिषद और सूत्र भी कुछ जानकारी प्रदान करते हैं, ज्यादातर संगीत वाद्ययंत्रों के बारे में। छांदोग्य उपनिषद (8.2.8) उस सम्मानित स्थान को इंगित करता है जो गीता और वाद्य ने आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने वाले लोगों के लिए भी आनंद उठाया, और समागण के आधार पर उपासना कर्म का एक सुंदर वर्णन देता है।

सांख्यान श्रौतसूत्र में शतांत्री वीणा के निर्माण का विस्तृत विवरण मिलता है। इसमें कुछ अन्य वाद्य यंत्रों का भी उल्लेख है। इनमें 'कंडा वीणा' भी थी, जिसे घटारी भी कहा जाता था और इसे प्लेट्रम द्वारा बजाया जाता था। 'पिछोरा' सुशिरा वाद्य की तरह बजाया जाता था। 'अलाबू वीणा' के ऊपरी भाग में वानर के मुख जैसा थोड़ा टेढ़ा एक तुम्बा था। इनमें से कई वाद्ययंत्र महिलाओं द्वारा बजाए जाते थे।

छांदोग्य उपनिषद में वीणा का उल्लेख किया गया है। बृहदारण्यक उपनिषद के साहित्य में 'दुंदुभि', 'शंख' और 'वीणा' भी मिलते हैं।

शिक्षा ग्रंथ वेदांग साहित्य के रूप में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जिसने पूरे इतिहास में वैदिक परंपरा की रक्षा की है और इसे वेदों के अध्ययन के लिए बनाए रखा है। सामवेद की नारदी शिक्षा में सामवेद, ऋग्वेद और यजुर्वेद में प्रयुक्त स्वरों (संगीत स्वरों) का

विस्तृत विवरण है। नारदी शिक्षा का छठा खंड सामवेद की गात्र–वीणा, श्रुति और वृत्ति के बारे में वर्णनात्मक जानकारी प्रदान करता है। गान में दो प्रकार की वीणाओं का वर्णन किया गया है: 'दार्वी वीणा' (या काष्ठमयी वीणा) और 'गात्र–वीणा'।

गात्र–वीणा (जो अंगुलियों से बजाई जाती है) के साथ समगान गाया जाता है (1, 6, 1–2)। नारद ने अपने गंधर्व विषयक ग्रन्थों में गायक और वादक के गुण और दोष बताए हैं।

पौराणिक स्रोत

पुराणों में भारतीय संगीत की विस्तृत जानकारी भी है। वे अधिकतर रचना, प्रलय, मनोरंजन, दैवीय वंशावली, मनु की आयु, राजाओं की वंशावली, दर्शन और योग आदि की जानकारी देते हैं, लेकिन उनमें से कुछ में कविता और संगीत की भी जानकारी होती है। वे वास्तव में प्राचीन विश्वकोश हैं जो प्राचीन भारत को ज्ञात सभी विषयों पर व्यावहारिक रूप से जानकारी देते हैं। हरिप्रसाद शास्त्री ने कहा, ''कुछ भी पुराना एक पुराण का विषय हो सकता है, और यह जीवन के सभी पहलुओं को शामिल करता है।'' पारंपरिक दृष्टिकोण के अनुसार अठारह महा–पुराण और अठारह उप–पुराण हैं। 9 विभिन्न पुराणों को विभिन्न कालखंडों में संकलित किया गया था। उनमें से सबसे पहले महाभारत के समकालीन थे। संगीत की जानकारी अधिकतर वायु–पुराण, मार्कण्डेय पुराण और विष्णु–धर्मोत्तर पुराण में मिलती है। हरिवंश तकनीकी रूप से महाभारत का पूरक है। कुछ इसे पुराणों में शामिल करते हैं। चालिक्य नामक एक प्रकार के संगीत प्रदर्शन के लिए हरिवंश की काफी प्रशंसा की गई है। यह एक गंधर्व प्रकार का गायन था जिसके साथ कई वाद्य यंत्र होते थे। कहा जाता है कि छह ग्राम–राग इसमें निहित थे और इसे बहुत कठिन अभ्यास से ही प्राप्त किया जा सकता था। केवल कृष्ण और कुछ गंधर्व जानते थे कि चालिक्य के प्रदर्शन का मंचन कैसे किया जाता है। चालिक्य दो प्रकार के थे– समूह 'चालिक्य' और 'सोलो चालिक्य'। यह नृत्य और अभिनय के साथ संगीत का एक प्रकार था। बाद के समय में चालिक्य के लिए भी चालिका और कालिता शब्द का प्रयोग होने लगा। वीणा, वेणु (बाँसुरी) और मृदंग संगत के उपकरण थे जो आमतौर पर चालिक्य संगीत में उपयोग किए जाते थे। कृष्ण को हॉलिसाका समूह नृत्य का आविष्कारक कहा जाता है जो रास में विकसित हुआ। हरिवंश में, कृष्ण विभिन्न संगीत गतिविधियों के मुख्य केंद्र हैं। निम्नलिखित संगीत वाद्ययंत्र उपयोग में थे – वीणा, वल्लकी, महती स्ट्रिंग उपकरणों के बीचय पनावा, दर्दुरा, अनाका, मुराजा, मृदंगा और भेरी मेम्ब्रेनोफोन उपकरणों मेंय और वेणु पवन उपकरणों के बीच।

निष्कर्ष:

मार्कंडेय पुराण (लगभग 900 ई.) में भी सात स्वरों, ग्राम–रागों, मूरचनों, सात प्रकार के स्वर संगीत, लय की तीन किस्मों (ताल और गति), उनतालीस तानों और चार प्रकार के स्वरों का उल्लेख है। संगीत वाद्ययंत्र (स्ट्रिंग, मेम्ब्रेनोफोन, पवन और झांझ)। निम्नलिखित वाद्य यंत्रों का विशेष उल्लेख मिलता है– वीणा, वेणु, दर्दुरा, पणव, मृदंग, पटह, अनाका और दुंदुभि। इसलिए ये संगीत वाद्ययंत्र भारतीय संगीत संदर्भ में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

संदर्भ

1. S.A.K. Durga. (2004). *Ethnomusicology: A study of intercultural musicology*. Delhi: B.R.Rhythms, Reprint, Divine Books.
2. David McKay. (1964). *Foundations of sociology*. G.A. Lundberg: The Macmillan Company.
3. Gowry Kuppuswamy, M. Hari Haran & B.C. Deva. (1980). Indian music; A prospective. Delhi: Sandeep Prakashan.
4. Praveen Patnaik. (2006). Music: Cross-cultural perception. New Delhi: Commonwealth Publishers.
5. B.C. Deva. (1993). Musical instrument. New Delhi: National Book Trust.
6. B.C. Deva. (1978). Musical instrument of India. KLM, Calcutta, Kanishka Publishers.
7. G.N. Joshi. (1977). Understanding Indian classical music. (1st ed.). Bombay: Taraporevala.

2014, RHIMRJ, All Rights Reserved

ISSN: 2349-7637 (Online)